RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 76, अंक : 4 एक प्रति 2 : रुपये

रविवार 28 अप्रैल, 2019

विक्रमी सम्वत् 2076, सृष्टि सम्वत् 1960853120

दयानन्दाब्द : 195 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–76, अंक : 4, 25-28 अप्रैल 2019 तदनुसार 15 वैशाख, सम्वत् 2076 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

उत्तम चाल चल

ले०–स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

अपक्रामन्पौरुषेयाद् वृणानो दैव्यं वचः।
प्रणीतीरभ्यावर्तस्व विश्वेभिः सखिभिः सह।।

–अथर्व० ७।१०५।१

शब्दार्थ–पौरुषेयात् = पुरुष–सम्बन्धी [वचन] से **अपक्रामन्** = दूर भागता हुआ [और] **दैव्यम्** = देवप्रणीत **वचः**= वचन को **वृणानः** = वरण करता हुआ, अपनाता हुआ तू **विश्वेभिः** = सम्पूर्ण **सखिभिः** = सखाओं के **सह** = साथ **प्रणीतीः** = उत्तम चालों को **अभ्यावर्तस्व** = सब ओर से बर्ताव में ला।

व्याख्या–मनुष्य–जीवन का उद्देश्य क्या है, इस विषय में बहुत थोड़े मनुष्य संसार में सतर्क हैं। मनुष्यों की बहुत अधिक संख्या तो अपने लक्ष्य के विषय में कुछ जानती ही नहीं। खाना, पीना, पहनना, भोग भोगना–यही उनके लिए मनुष्य–जीवन का परम लक्ष्य है, परन्तु यह तो कीट–पतङ्ग, पशु–पक्षी आदि को भी प्राप्त है? क्या मनुष्य की विशेषता (ज्ञान) केवल इन पशुवृत्तियों की तृप्ति के लिए मनुष्य को मिली है? यदि मनुष्य–जीवन का लक्ष्य कुछ अन्य ही है, तो उसका उपदेश भी कहीं होगा। मनुष्यों की अधिकांशता क्या वाणी से और क्या कार्य से भोगसामग्री जुटाने को ही मनुष्य–जीवन की सिद्धि समझ रही है। भगवान् ने मनुष्य को उसकी उत्पत्ति के साथ ज्ञान भी दिया था। उस ज्ञान को वेद कहते हैं। वेद के शब्दों में उसे **'दैव्यं वचः'** भी कहते हैं। वेद कहता है–**'अपक्रामन् पौरुषेयाद् वृणानो दैव्यं वचः'** = पौरुषेय वचन से दूर हटकर दैव्य वचन का वरण कर।

मनुष्य–जीवन का उद्देश्य, उद्देश्य–सिद्धि के साधन सभी **'दैव्यं वचः'**= वेद में उक्त हैं। उसको अपना! महान्–से–महान् विद्वान् भी मनुष्य–जीवन की इतिकर्त्तव्यता का पूर्ण ज्ञान नहीं दे सकता, अतः भगवान् ने सृष्टि के आरम्भ में सर्व मनुष्यों के कल्याणार्थ वेदवाणी का उपदेश किया। वेद–ज्ञान सब प्रकार के अज्ञान तथा उससे होने वाले पाशों का विनाश करता है–**'उत् त्वा निर्ऋत्याः पाशेभ्यो दैव्या वाचा भरामसि'** [अथर्व० ८।१।३]–दैवी वाक् द्वारा पाप के पाशों से हम तेरा उद्धार करते हैं। वेद में इस दैवी वाक् को **'कल्याणी वाणी'** (यजुः० २६।२) भी कहा गया है। इसको अपनाने का अर्थ है–**'प्रणीतीरभ्यावर्तस्व विश्वेभिः सखिभिः सह'**= सम्पूर्ण मित्रों के साथ उत्तम चालों को सब ओर से बर्ताव में ला।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। कोई एक मनुष्य दूसरों से सहायता–प्रत्यक्ष या परोक्ष में–लिये बिना अपनी शरीर–यात्रा नहीं चला सकता। यही परमुखापेक्षिता समाज–निर्माण का मूल कारण है। समाज को सुचारुरूप से चलाने के लिए विशेष व्यवस्थाओं का विधान करना पड़ता है। वेद का आदेश है कि हे मनुष्य! तू सब सखाओं = अपने–जैसों के साथ प्रणीति= उत्तम चाल चल, अर्थात् ऋजुमार्ग से चलकर अपनी उन्नति करने वालों के साथ वैर–विरोध तथा कुटिलता का व्यवहार न कर।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

आगन्म विश्ववेदसमस्मभ्यं वसुवित्तमम्।
अग्ने सम्राडभि द्युम्नमभि सह आयच्छस्व।।

–यजु० ३.३८

भावार्थ–हे सब से अधिक ज्ञान, बल और धन के स्वामी परमात्मन्! हम आपकी शरण को प्राप्त होते हैं, आप कृपा करके सबको ज्ञान, धन और बल प्रदान करो। भगवान्! आप सच्चे सम्राट् हो आप जैसा समर्थ, न्यायकारी, महाज्ञानी, महाबली दूसरा कौन हो सकता है। हम आप, महाराजाधिराज की प्रजा हैं, हमें जो कुछ चाहिये आपसे ही माँगेंगे, आप जैसा दयालु दाता न कोई हुआ, न है और न होगा। आपने अनन्त पदार्थ हमें दिये, दे रहे हो और देते रहोगे, आपके अन्न आदि ऐश्वर्य हमारे लिए ही तो हैं, क्योंकि आप तो सदा आनन्दस्वरूप हो आपको धन की आवश्यकता ही नहीं। जितने लोक लोकान्तर आपने बनाये हैं, ये सब आपने अपने प्यारे पुत्रों के लिए ही बनाये हैं, अपने लिए नहीं।

पुनर्नः पितरो मनो ददातु दैव्यो जनः।
जीवं व्रातꣳसचेमहि।।

–यजु० ३.५५

भावार्थ–हे हमारे पूज्य पालन–पोषण करने वाले महापुरुषो! परमात्मा की दया और आप महापुरुषों के आशीर्वाद से हमें ऐसा योगीराज वेदवेत्ता विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ सन्त महात्मा, संसार के कामी क्रोधी पुरुषों से भिन्न, शान्तात्मा महापुरुष प्राप्त हो, जिसके यथार्थ उपदेशों से, हम अपने जीवन और आचरणों को सुधारते हुए, परमेश्वर के अनन्य भक्त बनकर अपने जन्म को सफल करें।

वयꣳसोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः।
प्रजावन्तः सचेमहि।।

–यजु० ३.५६

भावार्थ–हे सोम सत्कर्मों में प्रेरक जगदीश्वर! आपके बनाये वैदिक नियमों के अनुसार अपना जीवन बनाकर, अपने आत्मा में आपके ज्ञान को धारण करते हुए, अपने सम्बन्धिवर्ग सहित इस लोक और परलोक में आपकी कृपा से हम सदा सुखी रहें।

आ न एतु मनः पुनः क्रत्वे दक्षाय जीवसे।
ज्योक् च सूर्यं दृशे।।

–यजु० ३.५४

भावार्थ–हे ज्ञानमय परमात्मन्! आपकी कृपा से, हम उत्तम वैदिक कर्म, वेद विद्या और उत्तम बल प्राप्ति पूर्वक, बहुत काल तक जीवन धारण करते हुए, आप ज्योतिर्मय परमात्मा के यथार्थ ज्ञान को प्राप्त हों। भगवान्! आपके यथार्थ स्वरूप को जानकर, आपकी वेद–विद्या का ही सारे संसार में प्रचार करें, ऐसी हमारी प्रार्थना को कृपा कर स्वीकार करें।

भूमि संरक्षण यज्ञ

ले.-पं. वेदप्रकाश शास्त्री, शास्त्री भवन, 4-E, कैलाशनगर, फाजिलका, पंजाब

1. ओ३म् भूम्यां देवेभ्यो ददति यज्ञं हव्यमरंकृतम्।

भूम्यां मनुष्याः जीवन्ति स्वधयान्नेन मर्त्याः। सा नो भूमिः प्राणमायुः दधातु जरदष्टिं मा पृथिवी कृणोतु स्वाहा।।

अथर्व. 12.1.22

इस भूमि पर उत्तम और दिव्य गुणों के लिए मनुष्य यज्ञीय पदार्थ और शोभित करने वाले, शक्तिदायक श्रेष्ठ कर्मों का आदान-प्रदान करते हैं। भूमि पर मनुष्य अपनी धारण शक्ति एवं पौष्टिक अन्न द्वारा जीते हैं। वह भूमि हम सभी को प्राण अर्थात् आत्मबल और आयु अर्थात् दीर्घ जीवन देवे। वही पृथिवी हमें स्तुति के साथ प्रवृत्ति अर्थात् भोज्य पदार्थों वाला बनाए।

भावार्थ-उर्वरा शक्ति से युक्त भूमि पर ही सभी प्रकार के खाद्य पदार्थ, औषधियां, फल-फूल आदि अन्य सभी प्रकार की आवश्यक वस्तुएं प्राप्त होती हैं। अतः इसकी रक्षा करना और उसकी गुणवत्ता बनाए रखना हम सभी का परम कर्त्तव्य है।

2. ओ३म् यत् ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु।

मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपं स्वाहा।।

अथर्व. 12.1.35

हे भूमे! तेरे जिस भी भाग या स्थान की मैं खुदाई करुं, वह शीघ्र ही भर जाय अर्थात् वह पुनः उगने योग्य हो जाय। हे खोजने योग्य भूमि! न तो मैं तेरे मर्म स्थल पर चोट करुं और न ही गहरी खुदाई करके तेरे हृदय को हानि पहुंचाऊं।

भावार्थ-आज भूमि का अंधाधुंध रूप से खनन हो रहा है और दोहन भी। स्वार्थवश आवश्यकता से अधिक हानिकारक स्तर तक इसका दुरुपयोग देखा जा सकता है। जिसका बन्द होना अत्यावश्यक है। हमें अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखना चाहिए।

3. ओ३म् भूरसि भूमिरसि अदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री।

पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृंह पृथिवीं मा हिंसीः स्वाहा।।

यजु. 13/18

हे धरणी! तेरा महान् अस्तित्व है, तेरी सत्ता अद्भुत है, तू आधार रूप भूमि है अर्थात् जड़-चेतन सभी तुझ पर ही आधारित और आश्रित हैं। तू अखण्डित है। सम्पूर्ण विश्व के समस्त प्राणियों का धारण-पोषण करने वाली है। तू समस्त लोक को धारण कर रही है। हे भूमे! हमें निवास योग्य स्थान प्रदान करो। हे मनुष्यो! इस पृथिवी को दृढ़ बनाए रखो। हे सहृदय महानुभाव! इस पृथिवी को हिंसित मत करो अर्थात् इसे किसी प्रकार की हानि मत पहुंचाओ। इसका दुरूपयोग मत करो।

4. ओ३म् सा नो भूमिः वि सृजतां माता पुत्राय मे पयः स्वाहा।। अथर्व. 12.1.6

वह भूमि 'हम सबके हित के लिए दुग्ध, अन्न एवं अन्य आवश्यक वस्तुएं विविध प्रकार से प्रदान करे जैसे माता अपने पुत्र को दूध, अन्न आदि प्रदान करती है।'

5. ओ३म् गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तोऽरण्यं ते पृथिवि स्योनमस्तु। माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः स्वाहा।।

अथर्व. 12/1/11,12

हे पृथिवि! हमारे लिए तेरी पहाड़ियां, ऊंचे-ऊंचे पर्वत, हिमाच्छादित पर्वत शिखर और तेरे हरे-भरे वन अत्यन्त मनोहारी और सुहावने हों। एतादृश गुणों से परिपूर्ण यह भूमि हमारी माता है और हम इस विस्तृत भूमि के पुत्र हैं।

भावार्थ-हम सभी का परम कर्त्तव्य है कि हम अपने उज्ज्वल भविष्य के लिए इस भूमि की उर्वराशक्ति, पर्वत, वन सम्पदा, जल आदि का संरक्षण करें, साथ ही वृद्धि भी। क्योंकि यह पृथिवी हमारी मातृभूमि है और हम इसके पुत्र हैं। पुत्र होने के नाते मातृभूमि हेतु अपना सर्वस्व समर्पण के लिए तत्पर रहें।

यह तन समर्पित, यह मन समर्पित,
यह धन समर्पित, हे मातृभूमे!
सर्वस्व समर्पित।
चाहता हूँ कुछ और भी दूं।।

6. ओ३म् शन्नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शन्नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः स्वाहा।। ऋ. 7/35/8

स्थिर और दृढ़ पर्वत मालाएं हमारे लिए शांतिदायक हों। नदियां और समुद्र हमारे लिए शान्तिप्रद हों। कुएं, और जलाशय आदि के जल हम सभी के लिए सुखदायक और कल्याणकारक हों।

भावार्थ-इस वैदिक प्रार्थना पर गहन एवं गम्भीर चिन्तन करने पर प्रतीत होता है कि आज पर्वतमालाएं पूर्णरूपेण स्थिर नहीं हैं। क्योंकि विभिन्न उद्देश्यों से पर्वतों को विस्फोटक पदार्थों से उड़ाया जा रहा है, जिससे उनकी पकड़ शिथिल हो जाती है। बादल फटने, या तेज वर्षा होने पर वे पहाड़, पहाड़ियां मलबे के साथ नीचे आकर नदी, सड़क मार्गों को अवरुद्ध कर देती हैं। नदियों की रौद्ररूप धारण किए बाढ़, समुद्र की सुनामी सदृश उठती ऊंची-ऊंची लहरें तटीय क्षेत्रों को हानि पहुंचाती हैं। अतः इन विषम परिस्थितियों से हे भगवान्! हमारी रक्षा करें और भूमि, पर्वत, नदियों, सागरों को हानि पहुंचाने वाले महानुभावों को सद्बुद्धि प्रदान करें।

7. ओ३म् भूम्यां मनुष्या जीवन्ति स्वधयान्नेन मर्त्याः।

सा नो भूमिः प्राणमायुर्दधातु स्वाहा।। अथर्व. 12.1.22

यह भूमि मनुष्य का जीवनाधार है। इस भूमि पर मनुष्य एवं अन्य सारे प्राणी जीवित रहते हैं। मनुष्य अपनी धारण शक्ति से स्वादिष्ट एवं पौष्टिक अन्न द्वारा जीते हैं। वह यह भूमि हमें प्राण (आत्मबल) और दीर्घायु प्रदान करे।

8. ओ३म् यां द्विपदः पक्षिणः सम्पतन्ति हंसाः सुपर्णाः शकुना वयांसि। वर्षेण भूमिः पृथिवी वृतावृता सा नो दधातु प्रिये धामनि धामनि स्वाहा।

अथर्व. 12.1.51,52

जिस भूमि पर दो पैर वाले पक्षी यथा-हंस, सुपर्ण, बड़े-बड़े पंखधारी उड़ने वाले गरूड़ आदि, शकुन= शक्तिशाली गिद्ध, चील आदि पक्षीगण उड़ते रहते हैं। वर्षा से घिरी और ढकी हुई विस्तृत भूमि अर्थात् आश्रय स्थल हमें कल्याणकारी बुद्धि के साथ प्रत्येक रमणीय स्थान में रखें।

भावार्थ-जैसे विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तुओं के जीवनयापन एवं विचरण हेतु भूभाग अर्थात् वन्य क्षेत्र की आवश्यकता है वैसे ही मनुष्यों के लिए भी वर्षा से हरी-भरी विस्तृत और रमणीय भूमि चाहिए जहां वे सुखपूर्वक स्वस्थ रहते हुए जीवन व्यतीत कर सकें। परन्तु आज वन संकुचित हो गए हैं जहां वन्य जीवों का निवास दूभर है, जिससे वे विवशतः ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों की ओर पलायन कर रहे हैं। अत्यधिक बढ़ती जनसंख्या के कारण मानव निवास स्थल भी सीमित हो गए हैं। जिससे उनका स्वच्छ और स्वस्थ रहना एक स्वप्नमात्र दृष्टिगोचर हो रहा है। जो चिन्ता और चिन्तन का विषय है।

9. ओ३म् भूमे मातर् नि चेहि मा भद्रया सुप्रतिष्ठितम्।

संविदाना दिवा कवे प्रियां मा धेहि भूत्यां स्वाहा।।

अथर्व. 12.1.63

हे धरती माता। मुझको कल्याणी बुद्धि के साथ अत्यधिक प्रतिष्ठा वाला बनाए रखो। हे गतिशीले! (जो चलती है या जिस पर हम चलते हैं) प्रकाश के साथ मिली हुई तू मुझको श्री अर्थात् सम्पत्ति, शोभा, कांति, विद्या, विभूति (ऐश्वर्य) में स्थापित कर।

भावार्थ-जो मनुष्य उत्तम भाव से पृथिवी पर अपना कर्त्तव्य पालन करते हैं, वे अत्यधिक प्रतिष्ठा प्राप्त कर ऐश्वर्यवान् और श्रीमान् होते हैं। अतः प्रत्येक व्यक्ति इस पृथिवी को मातृभूमि मान कर सर्वप्रकारेण इसका संरक्षण करे। किसी प्रकार की भी हानि न होने दे।

10. ओ३म् उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु प्रसूताः।

दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः हे मातृभूमे! तेरी गोदें हमारे लिए नीरोग और राजरोग (यक्ष्मा) रहित उत्पन्न हों। अपनी आयु को दीर्घकाल तक जागृत रखते हुए हम तेरे लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दें। हे मातृभूमे! तुझे करबद्ध प्रणाम! शत-शत नमन!

नमस्ते सदा वत्सले मातृभूमे,
त्वयार्य भूमे सदा वर्धितोऽहम्।
महामंगले पुण्यभूमे! त्वदर्थे,
पतत्वेष कायो नमस्ते नमस्ते।।

सदा ही वात्सल्य से परिपूर्ण हे मातृभूमे! तुझे सहस्रशः प्रणाम! हे आनन्दमयी आर्य भूमे! तेरी वात्सल्यमयी कृपा से ही हम सभी वृद्धि को प्राप्त हुए हैं। हे महा-मंगलकारिणी पुण्यभूमे! तेरे लिए तन-मन-धन सर्वस्व समर्पित करते हुए तुझे अनेकशः प्रणाम! बारंबार करबद्ध नमस्ते!

11. ओ३म् नमो मात्रे पृथिव्यै नमो मात्रे पृथिव्यै।

कृष्यै त्वा क्षेमाय त्वा रय्यै त्वा पोषाय त्वा स्वाहा।।

यजु. 9/22

इस भूमि माता को हमारा नमस्कार है। इस मातृभूमि के प्रति हमारा आदरपूर्वक नमस्कार है। हे भूमि! हम कृषि के लिए, रक्षण और आश्रय के लिए, नानाविध सम्पत्ति के लिए तथा पुष्टि अर्थात् रिद्धि-सिद्धि के लिए नम्रतापूर्वक तेरा सेवन करते हैं।

सम्पादकीय

असाधारण प्रतिभा के धनी—पं. गुरूदत्त विद्यार्थी

पं. गुरूदत्त विद्यार्थी का जन्म 26 अप्रैल 1864 को मुलतान शहर में लाला रामकृष्ण के यहां हुआ। उनके पिता श्री रामकृष्ण फारसी एवं उर्दू के प्रसिद्ध विद्वान् थे। पं. गुरूदत्त विद्यार्थी ने अपने विद्यार्थी जीवन में शानदार सफलताएं प्राप्त की, सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन ने उनके जीवन को पलट दिया। 29 जून 1880 को उन्होंने आर्य समाज में प्रवेश किया। गुरूदत्त के व्यक्तित्व में इतना आकर्षण था कि जो उन्हें मिलता था उनका मित्र बन जाता था। आर्य समाज में थोड़े ही समय में उनका स्थान बन गया। लोग उन्हें यंग फिलास्पर कहने लगे। मैट्रिक की परीक्षा पास करके उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने के लिए गुरूदत्त विद्यार्थी लाहौर के गवर्नमैंट कॉलेज में प्रविष्ट हुए। बहुत सी अंग्रेजी किताबें पढ़ने के कारण उनका झुकाव नास्तिकता की ओर होने लग गया था।

जब 1883 में स्वामी दयानन्द के रूग्ण होने का समाचार आर्य समाज लाहौर में पहुचा तो समाज के अधिकारियों ने लाला जीवनदास और पं. गुरूदत्त को स्वामी जी सेवा सुश्रूषा के लिए भेजने का निश्चय किया। 19 वर्ष के इस बालक को दयानन्द के जीवन का अन्तिम दृश्य हिलाकर रख गया। उन्होंने देखा कि किस प्रकार एक आस्तिक एवं लोकहित के लिए समर्पित महापुरूष अपने जीवन का उद्देश्य प्राप्त करने के पश्चात किस निर्भीकता के साथ अपनी आत्मा को सर्वात्मा से मिलाने के लिए तत्पर है। दयानन्द के इस निर्वाण के अभूतपूर्व दृश्य ने पं. गुरूदत्त के मन और मस्तिष्क पर अनोखा प्रभाव डाला। जो नास्तिकता के अंकुर गुरूदत्त के हृदय में प्रस्फुटित हो रहे थे, वे सभी महर्षि दयानन्द के परमात्मा के प्रति असीम विश्वास ने अंकुरित होने से पहले ही नष्ट कर दिए। पं. गुरूदत्त को निश्चय हो गया कि कोई शक्ति है जिसके सहारे इतनी असहनीय व्याधि होने पर भी महर्षि दयानन्द शान्त अवस्था में बैठे हैं। महर्षि दयानन्द ने उन्हें कोई उपदेश नहीं दिया, शंका समाधान नहीं किया, परमात्मा के विषय में तर्क वितर्क नहीं किया। परन्तु उन्होंने अपने आस्तिक जीवन से ही गुरूदत्त के अन्दर आस्तिकता के बीज बो दिए।

महर्षि दयानन्द के वेद प्रतिपादित सत्यज्ञान मूलक मन्तव्यों, सिद्धान्तों, शिक्षाओं और विचारों को जिस खूबी के साथ मुनिवर गुरूदत्त ने समझा, जीवन में ढाला और प्रचारित किया उस पर विचार करके मनुष्य चकित एवं आचम्भित हो जाता है। जीवन में केवल एक बार और वह भी परलोक गमन करते हुए ईश के सच्चे उपासक, योगी, यति तपस्वी दयानन्द को उन्होंने देखा था। वार्तालाप करने या शंका समाधान करने अथवा महर्षि के संसर्ग में रहकर उनके सदुपदेशों से लाभ उठाने का तो गुरूदत्त जी को समय नहीं मिला परन्तु कमाल यह है कि 19 वर्ष का यह नवयुवक महर्षि के प्राणोत्सर्ग के अद्‌भुत दृश्य को देखने मात्र से जो कुछ प्राप्त कर पाया वह किसी दूसरे को प्राप्त न हो सका। परलोक सिधार रहे ऋषि ने इन्हें एक दृष्टि देख लिया और ये कुछ के कुछ बन गए। गुरूदत्त ने ऋषि का संदेश अपने हृदय पटल पर अंकित कर लिया और समझा कि इसके प्रचार का उत्तरदायित्व मुझ पर ही है।

संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, फारसी, पदार्थ विज्ञान, भूगर्भ विद्या, रसायन शास्त्र, वनस्पति शास्त्र, शरीर विज्ञान आदि विविध विद्याओं में पारंगत इस नवयुवक को किस शक्ति ने आर्य समाज की ओर आकृष्ट किया? पाश्चात्यों की नास्तिकता बढ़ाने वाली निकम्मी शिक्षा और विचारधारा से पृथक कर सच्ची आस्तिकता का पाठ किसने पढ़ाया? संस्कृत ही पूर्ण और वैज्ञानिक भाषा है, यह ध्रुव सत्य गुरूदत्त को किसकी कृपा से ज्ञात हुआ? क्या किसी शास्त्रार्थ में पराजित होकर उसने ईश्वर की सत्ता को स्वीकार किया? या किसी की तर्कणा शक्ति से पराभूत होकर उसे अपना मार्ग बदलना पड़ा? नहीं बिल्कुल नहीं। कारण के बिना कोई कार्य नहीं हुआ करता। गुरूदत्त के जीवन की चिन्तनधारा में परिवर्तन भी बिना कारण कैसे हो सकता था। महान् संस्कारी आत्मा गुरूदत्त को एक दूसरी विलक्षण प्रभु भक्ति में रंगी दयानन्द की आत्मा ने बिना कुछ कहे ही अपने समान आस्तिकता के रंग में रंग डाला। महर्षि दयानन्द के प्राणोत्सर्ग दृश्य ने गुरूदत्त का जीवन, चिन्तन, दृष्टिकोण सभी कुछ बदल दिया।

एक बार किसी ने पं. गुरूदत्त विद्यार्थी से कहा कि आपको स्वामी जी के योगी होने के बारे में अनेक बातों का ज्ञान है। आप उनका जीवन चरित्र क्यों नहीं लिखते? अत्यन्त गम्भीर होकर उत्तर दिया कि मैं प्रयास कर रहा हूं। प्रश्नकर्ता ने पुनः पूछा– जीवन चरित्र कब छप जाएगा? गुरूदत्त बोले आप कागज पर लिखा जीवन चरित्र समझ रहे हैं, मेरे विचार में महर्षि का जीवन चरित्र अपनी पूर्ण आयु में लिखना चाहिए और इसी के लिए मैं प्रयत्न कर रहा हूं।

वेद की सत्यता पर गुरूदत्त की ऐसी दृढ़ आस्था थी कि जब कभी किसी वैज्ञानिक के कथित आविष्कार की कोई उनसे चर्चा करता तो वे झट से उत्तर देते कि हां भाई वह वैज्ञानिक सच्चाई के निकट आ गया है। सत्य पूर्ण है और प्रभु प्रदत्त वेद ज्ञान तथा सृष्टि नियम द्वारा पूर्व ही प्रकाशित है। जिस वैज्ञानिक को जब जितना बोध होता है उतना वह असत्य से दूर होकर सत्य के निकट आ जाता है। बस यही आविष्कार है, इससे आगे कुछ नहीं। अपने ऐसे ही पवित्र और सत्य ज्ञान मूलक विचारों को दिसम्बर 1885 में लाहौर आर्य समाज के वार्षिक उत्सव पर दिए गए अपने भाषण में गुरूदत्त जी ने व्यक्त करते हुए कहा था–

आधुनिक विज्ञान चाहे उसमें कितने ही गुण क्यों न हो, जीवन की समस्या पर कुछ भी प्रभाव नहीं डालता। वह मनुष्य की आत्मा में आन्दोलन पैदा करने वाले सब से महान् और कठिन प्रश्न मनुष्य जाति के आदि मूल और इसके अन्तिम भाग्य के हल करने में कुछ भी सहायता नहीं करता। आधुनिक विज्ञान चाहे प्रत्येक नाड़ी और हड्डी को चीर ड़ाले और लहू की बूंद की अतीव सूक्ष्म दर्शक यन्त्र द्वारा जो सम्भवतः उसे मिल सकता है, बड़ी सूक्ष्म परीक्षा कर ले, पर इस प्रश्न पर उससे कुछ भी नहीं बन पड़ता कि वह जीवन के रहस्य को खोल नहीं सकता। चाहे शताब्दियों तक चीर फाड़ और परीक्षण करता रहे। जीवन की समस्या वेदों के सहायता के बिना हल नहीं की जा सकती। वही केवल इस अद्‌भुत रहस्य का उद्‌घाटन कर सकते हैं और उन्हीं की ओर वैज्ञानिक लोगों को अन्त में आना पड़ेगा।

इस प्रतिभाशाली वेद मनीषी, तपस्वी विद्वान् को पूरे 26 वर्ष की जन सेवा का अवसर न मिल पाया परन्तु इस स्वल्प जीवन में ही उसने अमित यश और कीर्ति का अर्जन कर लिया। पं. चमूपति जी ने ठीक ही लिखा था कि–

यदि इनकी आयु कुछ लम्बी होती तो इनके द्वारा न जाने क्या-क्या पांडित्य के, विकास के, तर्क के, आध्यात्मिक अनुभूति के अमूल्य रत्न केवल आर्य समाज को ही नहीं किन्तु सम्पूर्ण मानव संसार को हस्तगत होते। इस अपरिपक्व अवस्था में इनके लिखे हुए लघु लेख तथा पुस्तिकाएं ही इनके असीम पांडित्य के बीच ही में रूक गए प्रवाह के अकाट्य प्रमाण हैं। गुरूदत्त केवल पंडित ही न था, वह सच्चा प्रतिभाशाली ऋषि पुत्र था। उसे न धन की परवाह थी और न जन की। सच की वेदि पर उसने अपना सुख, सम्पत्ति और अपना सर्वस्व स्वाहा कर दिया।

पं. गुरूदत्त विद्यार्थी असाधारण प्रतिभा के धनी थे। इतनी कम आयु में उन्होंने जो ज्ञान प्राप्त किया था उससे उनकी मेधा बुद्धि का ज्ञान हो जाता है। ऐसे असाधारण प्रतिभा के स्वामी और महर्षि दयानन्द के सच्चे शिष्य को 26 अप्रैल को उनके जन्मदिवस पर याद करते हुए उनके द्वारा आर्य समाज के लिए किए गए कार्यों को याद करें। उनके जन्मदिवस पर आर्य समाज की उन्नति के लिए प्रण लें, यही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

इहैव सन्तेऽथ विद्मस्तद्वयं

ले-शिवनारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर कोटा

छान्दोग्य उपनिषद् में प्रजापति कश्यप ने घोषणा की कि हृदयाकाश में जिस आत्मा का निवास स्थान है वह पाप से अलग है, जरा और मृत्यु से छूटा हुआ है, भूख और प्यास से परे है, सत्य काम और सत्य संकल्प है। उसकी खोज करनी चाहिए उसी को जानना चाहिए जो उसको खोज लेता है, जान लेता है वह सब लोकों और सब कामनाओं को प्राप्त कर लेता है।

उन्होंने यह भी कहा कि उसे जानने का, खोजने का प्रयत्न भी इसी मानव शरीर में रहते हुए किया जा सकता है। यदि इस जीवन में उसे खोजा न जा सका तो महती हानि है। उनकी इस घोषणा की प्रति ध्वनि दूर-दूर तक सुनाई दी।

कठोपनिषद् 6.4 में इसे दोहराया, 'इहे सन्तेऽथ विदमस्तद्रियं चेदवेदीर्महती विनष्टि।'

केनोपनिषद 2.5 में कहा गया, 'इहे चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः। आत्मा को इसी जीवन में जान लिया तो ठीक है यदि इस जीवन में नहीं जाना तो बड़ी हानि है।'

फिर जानने का कार्य प्रारम्भ हुआ तो कठोपनिषद् 2.23 में कहा गया है कि 'नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन' यह आत्मा भाषणों से, बुद्धि विकास से, बहुतशास्त्राध्ययन से भी नहीं जाना जा सकता है।

मुण्डक उपनिषद् 3.2.3 ने भी इसी को दोहराया ही नहीं वरन् इसमें यह और जोड़ दिया, 'नायमात्मा बल हीनेन लभ्यो न प्रमादत्तपसो वाप्यलिंगात।' इस आत्मा को बल हीन व्यक्ति नहीं जान सकता है, न ही इस आत्मा को प्रमाद से, तप से ही जाना जा सकता है।

फिर इसे जानने का प्रयत्न तेजी से चला तो कठोपनिषद् के ऋषि ने जानकर कहा,

'न जायतेम्रियतेवा विपश्चि-न्नायं कुतश्चन्न बभूव कश्चित्।

अजो नित्य शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे। कठोपनिषद् 2.18

श्रीमद्भगवद्गीता ने भी कुछ शब्दों के हेर-फेर के साथ दूसरे अध्याय के 20वें श्लोक में दोहरा दिया-'न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः। अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्य माने शरीरे।' यह शरीरी न कभी जन्मता है और न कभी मरता है तथा यह उत्पन्न होकर फिर होने वाला नहीं है। यह जन्म रहित नित्य निरन्तर शाश्वत् और अनादि है शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मरता है।

इसी धारणा को आगे बढ़ाते हुए गीता अध्याय 2 श्लोक 22 में कहती है-

वांसांसि जीर्णानियथा विहाय नवानिगृह्णाति नरोऽपराणि।

तथा शरीराणि विहायजीर्णा-न्यन्यानि संयाति नवानि देही।'

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नये वस्त्र धारण कर लेता है ऐसे ही देही (आत्मा) पुराने शरीर को छोड़ कर दूसरे नये शरीर में चला जाता है।

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः

अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्यु-ध्यस्व भारत।

अविनाशी जानने में न आने वाले और नित्य रहने वाले इस शरीरी के ये देह अन्त वाले कहे जाते हैं इसलिए हे अर्जुन तुम युद्ध करो।

भगवान श्री कृष्ण के कुल गुरू महर्षि गर्ग थे। उन्होंने ऋग्वेद के मण्डल 6 के सूक्त 47 के ऋषि के रूप में शरीर और शरीर के सम्बन्ध को बताते हुए कहा है।

युजानो हरितारथे भूरित्वष्टेह राजति।

को विश्वाहा द्विषतः पक्ष आसत उदासीतेषु सूरिषु।। ऋ. 6.47.19

अर्थ-जैसे कोई भी सारथि सुन्दर रथ के समान शरीर में चलने वाले घोड़ों को जोड़ता हुआ बहुत प्रकाशित होता है और सूक्ष्म करने वाला जीव इस शरीर में प्रकाशित होता है कौन इस शरीर में सब दिन द्वेष से युक्त का ग्रहण करता है और भी स्थित विद्वानों में मूर्ख का आश्रय कौन करता है?

कठोपनिषद् ने वेद के इस मंत्र की व्याख्या इस तरह की है-

आत्मानं रथिन विद्धि शरीरं रथमेवत्तु

बुद्धिन्तु सारथि विद्धि मन प्रग्रहमेव च।। कठ. 3.8

अर्थ-आत्मा को तुम रथी मानो और शरीर को रथ मानो। बुद्धि को सारथि और मनको लगाम मानो।

इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।

आत्मेन्द्रियमनो युक्तं भोक्ते त्याहुर्मनीषिण।। कठ. 3.4

इन्द्रियों को घोड़े कहा जाता है और विषय को उनका मार्ग कहा जाता है। आत्मा इन्द्रिय और मन मिले हुए अथवा इन्द्रिय और मन से समन्वित् आत्मा भोक्ता है।

शरीर और आत्मा का भेद बताते हुए ऋग्वेद में कहा गया है-

अधासु मन्द्रो अरतिर्विभावाव स्थति द्विवर्तनिर्वनेषाद्।

ऊर्ध्वा यच्छ्रेणिर्नशिशुर्दन्म क्षु स्थिरं शवृधं सूत माता।

ऋ. 10.61.20

भावार्थ-सब प्राणी शरीर प्रकृति के ही विकृत रूप हैं। उनमें बसने वाला आत्मा ही चेतन है जो इस जन्म और अगले जन्म, संसार और मोक्ष इन दो मार्गों पर गतिमान रहता है। अतएव वहीं नित्य है। उसकी उच्च स्थिति ही मोक्ष है। जहाँ वह स्थाई आनन्द की प्राप्ति करता है। वही सुख सृजक तथा प्रशंसनीय है।

ऋग्वेद 10.101.8 में कहा गया है कि देह ही इन्द्रियों का निवास स्थान है। वही आत्मा का पालक एवं सुख से रस पान करने का स्थान है वही कवच के तुल्य है।

श्वेताश्वतर 5.10 में कहा गया है

नैव स्त्री न पुमानेष न चैवायं नपुंसकः।

यद्यच्छरीरमादत्ते तेन तेन सरक्ष्यते।।

यह आत्मा न स्त्री है न पुरूष और न ही नपुंसक है। इसको जैसा शरीर मिल जाता है वह वैसा ही बन जाता है। आत्मा का कारण शरीर कैसा है इसे श्वेताश्वतर इस प्रकार बताता है, 'बालाग्रशत भागस्य शतधा कल्पितस्य च भागो जीवः स चानन्त्याय कल्पते।।' श्वे. उप. 5.9

बाल के खड़े भाग के सौवें भाग का सौंवा भाग किये हुए का और एक हिस्सा जीवात्मा को जानना चाहिए और वह ही सूक्ष्माति सूक्ष्म अनन्त कर्म और शक्ति के लिए समर्थ है सूक्ष्माति सूक्ष्म जीव अजर-अमर है तथा कार्यरूप प्रकृति से बना यह देह नश्वर है परन्तु कारण रूप प्रकृति अविनाशी है।

आत्मा शरीर में कहाँ रह कर शरीर का संचालन करता है?

इस प्रश्न का उत्तर कठोपनिषद् अध्याय 6 के श्लोक 17 में दिया है-

अंगुष्ठ मात्रः पुरूषोऽन्तरात्मा सदा जनानां हृदये संनिविष्टः।

तं स्वाच्छ शरीर त्प्रवृहेन्मुञ्जादिवेषीकां धैर्येण।

तं विद्या च्छु कममृतं तं विद्याच्छुकम मृक्तमिति।।

अंगुठे के परिणाम वाला परमात्मा आत्मा के अन्दर रहने वाले जन्म धारी मनुष्यों के हृदय में बैठा हुआ है। उस परमात्मा को अपने शरीर में प्रत्यक्ष करना चाहिए। मुंज से सींक जैसे निकालते हैं वैसे प्रणय काल में धैर्य से जीवात्मा को शरीर से निकालना चाहिए। उस आत्मा को शुद्ध पवित्र जाने।

मृत्यु के समय आत्मा शरीर निकल कर क्या करता है?

इस पर यजुर्वेद अध्याय 39 मंत्र संख्या 6 में कहा गया है-

सविता प्रथमेऽहन्नग्नि द्वितीये वायु स्ततृतीयऽआदित्यश्चतुर्थे चन्द्रमाः पञ्चमऽऋतु षःष्ठे मरूतः सप्तमे बृहस्पतिरष्टमे।

मित्रो नवमे वरूणो दशमऽइन्द्रऽ-एकादशे विश्वे देवा द्वादशे।।

अर्थ-हे मनुष्यों। इस जीव को शरीर छोड़ने पर पहिले दिन सूर्य, दूसरे दिन अग्नि, तीसरे दिन वायु, चौथे दिन आदित्य (महीना) पांचवें दिन चन्द्रमा, छठे दिन ऋतु सातवें दिन मरूत आठवें दिन बृहस्पति नवमें दिन, (प्राण) मित्र उदान दसवें दिन, विद्युत्त ग्याहरवें दिन और बारहवें दिन सब दिव्य गुण प्राप्त होते हैं। इसके बाद यह पुनर्जन्म पा लेता है। इसके विपरीत बृहदारण्यक की मान्यता इस प्रकार है-

तृण जलायुका तृणस्यान्तं गत्वाऽन्य माक्रममाक्रम्यात्मान-मुपसंहरात्येव मेवाय-मात्मेदं शरीरं निहत्याऽविद्यां गमयित्वा-ऽन्यमाक्र ममाक्र म्यात्मांन मुपसं हरति।। बृहद. उप. 4.43

जैसे तृण जलायुका (सुंडी) तिनके के अन्त पर पहुंच कर दूसरे तिनको को सहारे के तौर पर पकड़ कर अपने आप को परे फेंक कर अविद्या को दूर कर दूसरे शरीर रूपी तिनके का सहारा लेकर अपने आपको इस शरीर से खींच लेता है। इसे नया सुन्दर शरीर प्राप्त हो जाता है। आत्मा के शरीर से निकालने के बाद ही शरीर में विकार पैदा होने लगता है। कुछ समय उपरान्त ही वह सड़ने लगता है। पर्यावरण दूषित न हो इसलिए उसे जला दिया जाता है। कुछ लोग उसे जमीन में गाढ़ देते हैं और पारसी लोग उसे चील आदि पक्षियों के खाने के लिए मृत्यु के कुएं पर रख देते हैं। मृत्यु के बाद आत्मा का इस शरीर से कोई भी सम्बन्ध नहीं रहता है।

ऋग्वेद 10.16.7 में मृत शरीर को जलाने के लिए कहा गया है।

अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम इस जीवन में ही आत्मा के स्वरूप को ठीक तरह से जान कर मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होवें।

पृष्ठ 8 का शेष-आर्य समाज चौक पटियाला...

प्रस्तुत किया। इस कार्यक्रम में बिजनौर से पधारे भजनोपदेशक मोहित शास्त्री ने अपने भक्तिमय मधुर भजनों से श्रोताओं को मंत्र मुग्ध कर दिया। इस अवसर पर वीरेन्द्र सिंगला, वेद प्रकाश तुली, जितेन्द्र शर्मा, डा. सुनील आर्य, डा. संजय सिंगला, आनन्द मोहन सेठी, प्रवीण कुमार आर्य, हर्ष वधवा, प्रो. बत्रा, डा. ओमदेव आर्य, प्रवीण चौधरी, रमेश गंडोत्रा, के.के. मोदगिल, गुलाब सिंह, प्रो. विद्या सागर, राजेश कौल, रमण वर्मा, यशपाल जुनेजा, प्रिंसीपल संतोष गोयल, प्रेमलता सिंगला, संगीता सिंगला, वैजयन्ती माला सेठी, सरिता आर्य, नरेश बाला आदि अनेक गणमान्य लोग उपस्थित थे।

-विजेन्द्र शास्त्री

क्रान्तिकारी दयानन्द

ले.-डा. वेणीप्रसाद शर्मा

विश्व द्वन्द्वमय है, जो समयरूपी चक्र द्वारा चलता रहता है। समय बदलता है, युग बदलते हैं, एवं परिस्थितियों में परिवर्तन आता है, जिसका आधार विश्व की दो विरोधी शक्तियों का संघर्ष है। विश्व का इतिहास ज्ञान एवं अज्ञान, परोपकार एवं स्वार्थ तथा भ्रष्टाचार एवं सदाचार के संघर्ष की एक लड़ी है। विश्व में दुर्गुणों के प्रकोप के निवारणार्थ युगान्तरकारी परिवर्तन लाने वाली शक्तियां ही 'क्रान्ति' का निर्माण करती है। क्रान्ति सभ्यता की जननी है। नेपोलियन के शब्दों में Revolutions are like the most noxious dung-heaps which bring into life the noblest vegetables अर्थात् 'क्रान्ति' अति-हानिकारक कूड़े के सदृश होती है, जिससे अति उत्तम वानस्पतिक पैदावार होती है।' जिन विभूतियों के माध्यम से युग बदलता है, विचार बदलते हैं, भावनाएँ बदलती हैं एवं इतिहास एक नया मोड़ लेता है, उन्हें क्रान्तिकारी कहते हैं। प्रत्येक क्रान्तिकारी अपने युग का प्रवर्तक होता है, जिसका आविर्भाव देश एवं काल के हृदय में सन्निहित अनुभूति की अभिव्यंजना के लिए होता है। रूस में लेनिन तथा क्रोपाटकिन एवं जर्मनी में मार्क्स आदि क्रान्तिकारियों ने अपने-अपने राष्ट्र में युगान्तरकारी परिवर्तन किये। भारतीय संस्कृति का इतिहास क्रान्तियों का इतिहास है। ऐसे ही युग-प्रवर्तक क्रान्तिकारियों में महर्षि दयानन्द एक मुख्य युगान्तरकारी महामानव हुए हैं।

वह क्रान्तिकारी दयानन्द ही था जो धर्मान्धों के मनमाने-प्रहार, विपत्तियों, बाधाओं एवं संघर्षों में कुन्दन की भान्ति तेजोमय आलोक बन निकला। वह दयानन्द ही था जो जहरीले सांप से मरा नहीं, गुण्डों से डरा नहीं, वेश्या के आकर्षण में फंसा नहीं, विष से वह भयभीत नहीं हुआ। उसने विष पीकर भी अमृतवाणी की वर्षा की। जनता से अपमान-तिरस्कार सह कर भी वह मुस्करा दिया। वह दयानन्द ही था, जिसने धर्म के नाम पर दुर्गुणों को पनपने न दिया। वह दयानन्द ही था, जिसने नारी को जननी एवं भगिनी कह कर दुराचरण एवं कुत्सित विचारों को तिलांजलि देने के लिए प्रेरित किया। वह दयानन्द ही था, जो जीवन-यौवन को ब्रह्मचर्य-रूपी कठोर बन्धन में बांधकर मठों मन्दिरों एवं धार्मिक स्थलों में भटकता रहा। वह क्रान्तिकारी दयानन्द ही था, जिसने तत्कालीन विभिन्न धर्मावलम्बियों में पारस्परिक-वैमनस्य, ईर्ष्या-द्वेषादि दुर्गुणों के निवारणार्थ लोगों को धर्मात्माओं के गुणों से अवगत कराया एवं मानव-मन में क्रान्ति के भाव उत्पन्न किये।

सम्वत् १८८१ वि० में मौर्वी राज्य के टंकारा नामक स्थान में दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ, मानों धर्माडम्बरों से पीड़ित मानवता के लिए स्वर्णिम-प्रभात का उदय हुआ हो। उस समय धरणी अभिशापों से दग्ध थी। पाशविक मनोवृत्ति का नग्न नृत्य हो रहा था, व्यथित विधवाओं का हाहाकार था। सत्य-धर्म का दिवाकर साम्प्रदायिक-राहु द्वारा ग्रसा जा चुका था। आर्यों की वैदिक-कालीन स्वर्णमय आचार-विचारों से समावृत सभ्यता अर्वाचीन-चक्र की चाञ्चल्यपूर्ण गति से धूसरित हो रही थी। ऐसे में अवतारवाद, तीर्थों एवं पौराणिक अनुष्ठानों का विरोध कर वैदिक-संस्कृति की पताका फहराने वाला कौन था। कौन था वह क्रान्तिकारी, जिसने कहा था-'जो बलवान् होकर निर्बलों की रक्षा करता है, वही मनुष्य कहाता है?' अछूतोद्धार, स्वराज्य एवं खादी के विचारों का सर्वप्रथम प्रादुर्भाव हुआ, तो किसमें? 'आर्यसमाज' एवं 'गो-रक्षा-आन्दोलन' की स्थापना कर क्रान्ति की दुन्दुभि बजायी तो किसने? नि:सन्देह ऋषि दयानन्द ने ही।

ऋषि दयानन्द 'क्रान्ति' के तेज:पुञ्ज वैदिक-संस्कृति के अमर वैतालिक, सत्यपथ के चिर-पथिक, तर्क के महान् भण्डार, राष्ट्र के अजस्त्र-प्रकाश, भ्रातृ-भाव के सन्देशवाहक, प्रभावोत्पादक उपदेष्टा, हिन्दुत्व के सच्चे उपासक, नवीनता के प्रचारक, योद्धा-संन्यासी, युग-प्रवर्तक एवं आग्नेय महापुरुष थे।

वे निर्बलों, दीन-दुखियों, अनाथों एवं अपाहिजों की रक्षा के प्रति सहानुभूति प्रकट करने में 'क्राइस्ट', भ्रातृ-भाव एवं एकेश्वरवाद के सन्देशवाहक, ईश्वर-यशोगान में कबीर एवं रामदास, तथा आर्यत्व की रक्षा करने में गुरु गोबिन्द सिंह, शिवाजी एवं प्रताप के प्रतीक थे। सब गुणों में समन्वित दयानन्द में विचारों की पावनता, भावों की विशालता, चरित्र की उदात्तता का बाहुल्य था।

तत्कालीन राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र एवं रानाडे में तो ऋषि के आदर्शों का अंशमात्र ही विद्यमान था। रामधारी सिंह 'दिनकर' के शब्दों में 'दयानन्द के अन्य समकालीन सुधारक केवल सुधारक-मात्र थे, किन्तु दयानन्द क्रान्ति के वेग से आये। आदर्श राष्ट्र-निर्माण, मानवीय तत्त्वों की अनिवार्यता का प्रदर्शन ही आपके जीवन का सार था। उनके द्वारा रचित सत्यार्थ-प्रकाश इसका प्रतीक है। मानव-समाज के चरित्रहीनता रूपी विष के पनपते हुए फोड़े को आपने कुशल-वैद्य की भांति सत्यार्थ-प्रकाश, संस्कार-विधि, आर्याभिविनय, वेदान्त-ध्वान्त-निवारण, व्यवहारभानु आदि उपकरणों द्वारा चीरकर हिन्दू-समाज को स्वस्थ-रूप प्रदान किया। सत्यार्थ-प्रकाश के प्रथम दस समुल्लासों में ब्रह्मचर्य, गृहस्थाश्रम-व्यवहार, ओंकार आदि नामों की व्याख्या, आचार-अनाचार एवं विद्या-अविद्या आदि तत्त्वों की विस्तृत व्याख्या एवं उत्तरार्द्ध के चार समुल्लासों में आर्यावर्तीय मत-मतान्तरों का खण्डन-मण्डन एवं ईसाई तथा मुसलमानों के धर्मों की आलोचना क्रान्ति की रीढ़ सिद्ध हुई।

ऋषि दयानन्द वैदिक-संस्कृति के पंख थे। उन्होंने उसे उड़ा कर विश्व-सभ्यताओं की दौड़ में उपस्थित किया। आपका सम्पूर्ण क्रान्तिमय जीवन मानों विश्व की अन्य संस्कृतियों को असारता की चुनौती दे रहा है। उदाहरणार्थ 'तत्राहिंसासत्यास्तेय-ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमा:' मनुस्मृति (अ० ४, २०४) के ''यमान् सेवेत सततं न नियमान् तु केवलान्'' की व्याख्या के प्रसंग में सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में योग० साधनपाद सू० ३० को उद्धृत करके स्वामी जी मानव-ग्राह्य तत्त्वों का उल्लेख करते हुए क्रान्तिकारी विचारों को उपस्थित करते हैं-

''अहिंसा, वैर-त्याग, सत्य बोलना, अस्तेय अर्थात् मन-वचन से चोरी का त्याग, ब्रह्मचर्य अर्थात् उपस्थेन्द्रिय का संयम, अपरिग्रह अर्थात् अत्यन्त लोलुपता और स्वत्वाभिमान से रहित होना-इन पांच यमों का सदैव सेवन करें।''

आपकी क्रान्ति का आधार दुर्गुणों एवं अन्याय के त्याग में ही निहित है। आपने अन्यायकारियों को चुनौती एवं जन-जन को चेतावनी दी-

''...अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करें, इस काम में चाहे प्राण भले ही जावें परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से कभी पृथक् न होवें।''

नि:सन्देह आप 'न्याय्यात्पथ: प्रविचलन्ति पदं न धीरा:' के प्रतीक थे। ''रुग्ण हिन्दुत्व के जैसे निर्भीक नेता स्वामी दयानन्द हुए, वैसा और कोई न हुआ।'' आप आग पर चले एवं दीप-सम जले।

'ऋषि' नियतिवाद के विरोधी एवं कर्मानुसार वर्णव्यवस्था तथा स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकारों के पक्षपाती थे। आपने बाल-विवाह, मूर्तिपूजा एवं गोवध के अनौचित्य का प्रतिपादन समाजरूपी युद्धस्थल में गम्भीर गवेषणा, अकाट्य युक्तियों एवं तर्करूपी बाणों द्वारा किया। हिन्दुधर्मोद्यान में सद्गुण रूपी पादप-समूह के समीचीन वार्धक्यार्थ आपने आडम्बररूपी रूपी झाड़-झंखाड़ों का कुशल एवं सतर्क माली की भांति मूलोन्मूलन किया। इस भांति आप युग-प्रवर्तक सिद्ध होते हैं। श्री सत्यकाम विद्यालंकार के शब्दों में हम कह सकते हैं-''भारत के युग-प्रवर्तकों में दयानन्द का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने जनता की विचारधारा में अत्यन्त क्रान्तिकारी परिवर्तन किया।''

आपने सविता के समान अपनी भाव-रश्मियों से मानवता के भुवन को आलोकित किया। आपके द्वारा उत्साह-हीनों को उत्साह, पतितों को आत्म-बल, निरुद्यमियों को स्फुरणा, अज्ञानियों को ज्ञान, अन्धों को ज्योति प्राप्त हुई।

नि.सन्देह ऋषि की क्रान्ति अद्भुत थी, बहुमुखी भी एवं सर्वांगीण थी। आपकी क्रान्ति सामाजिक थी, धार्मिक थी, राष्ट्रिय थी, मानवीय थी। वह वैदिक संस्कृति के पुनरुत्थान की द्योतक एवं ऋषि की महत्ता की परिचायक थी। सुप्रसिद्ध विचारक श्री वी. के. मुन्शी ने ठीक कहा है-

''विरोध की लपटों के अन्तराल में भी उन्होंने प्रगतिशील क्रान्तिकारी विचारधाराएँ समाज को परिवर्तित करने के लिए उपस्थित की और इस दृष्टि से स्वामी दयानन्द क्रान्तिकारी हैं।''

जीवन और मृत्यु में महान् महर्षि दयानन्द

ले.-प्रा. रमाकान्त दीक्षित

''स्वामी दयानन्द भारतवर्ष के उन धार्मिक महापुरुषों में से एक हैं, जिनका गुणानुवाद करने में ही जीवन समाप्त हो सकता है।

उन्होंने मन, वचन और कर्म की स्वतन्त्रता का सन्देश दिया। वह अपने जीवन और मृत्यु में महान् ही रहे।''

उपर्युक्त कथन में श्रीमती सरला देवी चौधरानी ने महर्षि-जीवन की महत्ता का दिग्दर्शन अत्यन्त मार्मिक एवं बुद्धिमत्तापूर्ण शब्दों में कराने का सुप्रयत्न किया है। इस कथन में महर्षि के सत्य अस्तित्व का साक्षात्कार विशद रूप में हो जाता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवनोल्लेख इस बात को लेकर किया जा सकता है कि वे 'पूर्ण मानव' थे। उनके जीवन तथा शिक्षा की आधार-शिला धार्मिकता और आध्यात्मिकता थी। उनकी आस्था पत्थर-पूजन में न होकर, निराकार ब्रह्म में थी। उन्हें वैदिक ग्रन्थ मान्य थे। ढोंग, दिखावे अथवा आडम्बर से उन्हें घोर घृणा थी। ब्रह्मचर्य का तेज उनके शरीर में अन्वित था। उनका रहन-सहन साधारण था और विचारों की महानता जन-गण-मन का नेतृत्व करती थी। वे तो अपनी प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति का पुनः उद्धार कर प्रकाश में ला रहे थे। वास्तव में ये पूर्णतः आध्यात्मिक पुरुष थे। महात्मा मनु ने भी कहा है-

श्रुतिस्मृत्यदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः।
इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्।।
(मनु० २,६)

वेद और स्मृति में कहे हुए धर्म का अनुष्ठान करता हुआ पुरुष इस लोक में कीर्ति को प्राप्त होता है और परलोक में (अर्थात् मरकर) स्वर्ग, मोक्षादि उत्तम सुख को प्राप्त होता है।

हुआ भी ऐसा ही। वे जब तक जीवित रहे उनकी कीर्ति-पताका देश-देशान्तर में फहराती रही। उनकी विद्वता एवं स्पष्टवादिता से विदेशी विद्वान् तक प्रभावित थे। यद्यपि वे अपनी प्रशंसा के लोभी नहीं थे, तो भी उनकी कीर्ति में चार चाँद जगमगाने लगे थे।

उत्तम गुण, कर्म, स्वभावानुसार उन्हें मरने पर स्वर्ग का सुख प्राप्त हुआ होगा। मरते समय चींटी से लेकर मनुष्य-पर्यन्त को कैसी पीड़ा होती है, यह अकथनीय है। पर, मरते समय महर्षि के मुख-मण्डल पर तनिक भी खिंचाव न आया। उनका देहावसान ३० अक्तूबर, सन् १८८३ ई० (सं० १६४० वि०) को भिनाय की कोठी पर अजमेर नगर में हुआ था। उस दिन कार्तिक मास की अमावस्या थी। दीपावली के दीप जगमगा रहे थे। उस दिन मृत्यु को प्राप्त होने से कुछ समय पूर्व ही उन्होंने कहा था-''अब हमारा अन्त समय है। सब उपचार छोड़ दो।'' उन्होंने सायं ६ बजे मकान के सभी द्वार भी खुलवा दिये थे। उस क्षण वे सबको धैर्य दिला रहे थे। उन्होंने कई वेद-मन्त्र पढ़े। संस्कृत में ईश्वरोपासना की। हिन्दी में प्रभु का गुण-कीर्तन किया। गायत्री-मन्त्र का जाप कर अन्तिम श्वास, यह कहते हुए छोड़ने लगे-''आह, तैने अच्छी लीला की।''

नास्तिक-शिरोमणि गुरुदत्त एम० ए० को, जिन्होंने ईश्वर की सत्ता को स्वीकार न करने की कसम खा रखी थी, ऋषिवर मरणासन्न होने पर भी आस्तिकता का पाठ पढ़ा गये। ऐसे में युग्मविजय-माला उनके कंठ की शोभा बढ़ा रही थी। एक विजय थी मृत्यु पर और दूसरी थी नास्तिक गुरुदत्त एम० ए० पर।

बहुत से लोग कहते हैं कि इतिहास में महात्मा गांधी की ऐसी एक ही मिसाल है कि जिन्होंने अपने हत्यारे को काल के कराल गाल में, जाते-जाते भी क्षमा कर दिया था, परन्तु स्वामी दयानन्द को सम्भवतः लोग भूल जाते हैं, जिन्होंने गांधी के पथ को प्रशस्त किया और यह कह कर कि ''मैं संसार में किसी को कैद करवाने नहीं आया, किन्तु सबको मुक्त कराने आया हूँ'' दूध में विष देने वाले को भी मुक्त करवा दिया था। यह ऋषिवर की महानता नहीं, तो और क्या है?

ऐसी महान् आत्माएं यदा-कदा ही अवतरित हुआ करती हैं। एक जमाना था, जब रावण-राज्य में असुर-प्रवृत्तियों ने अपना मुख फाड़ रखा था। उनका नाश करने के लिए राम ने एक महापुरुष के रूप में जन्म लिया। उसके बाद एक बार फिर भारत अत्याचार और अन्याय का क्रीड़ास्थल बन गया। निरपराध पांडवों को कौरवों ने छल-बल से वन-पर्वत की खाक छानने के लिए मजबूर कर दिया, तो श्रीकृष्ण सामने आये। अशोक के समय कलिंग के महायुद्ध और हिंसा की ज्वाला को बुझाने बुद्ध सामने आये। पुनः मुगलकाल में बढ़ते हुए तात्कालिक अत्याचारों को नष्ट करने के लिए तुलसीदास का जन्म हुआ। और, एक जमाना वह आया, जब भारत में अंग्रेज़ियत का बोलबाला हो गया। हमारा देश पराधीनता के बन्धनों में जकड़ गया। अंग्रेज़ी को राष्ट्र-भाषा घोषित कर दिया गया। मानव-जाति को फ़िरकों में बाँट दिया गया। अनाथों एवं विधवाओं के साथ नानाविध अत्याचार किये गये। गुलामों की एक लम्बी फौज़ तैयार कर दी गई है। इन निषेधात्मक पहलुओं के लिए महर्षि का जन्म सार्थक बनकर सामने आया। कर्मवीर दयानन्द की आत्मा इसे सहन न कर सकी।

उन्होंने निषेधात्मक पहलू का मूलोच्छेदन करने के लिये (Back to the Vedas) 'वेदों की ओर लौटो' के विधायक पहलू की संस्थापना की। राजनीति और धर्म का क्या सम्बन्ध है-यह बतलाया। देश की एकता तथा संगठन के लिए राष्ट्र-भाषा हिन्दी हो-इस बात पर बल दिया। नाना मत-मतांतरों का खंडन कर सत्यधर्म का प्रचार किया। अनाथों, शूद्रों और स्त्रियों को उनके अधिकार दिलाने का भरसक प्रयत्न किया और यह बतलाया कि केवल भौतिकवाद के सहारे विश्व-कल्याण असम्भव है, आध्यात्मिकता की नींव पर ही विश्व-कल्याण का भव्य भवन खड़ा हो सकता है। तभी एकता व समानता का आनन्द भी प्राप्त हो सकता है। भौतिकवाद के वे आवश्यकतानुसार हिमायती थे।

कर्त्तव्यनिष्ठ महर्षि दयानन्द की इस परम्परा को आगे बढ़ाने का श्रेय स्वामी श्रद्धानन्द को अवश्य मिलना चाहिए, क्योंकि उन्होंने बहुत कुछ महर्षि के जीवन से शिक्षा ग्रहण कर उस पर अमल भी किया। राजनीति और धर्म, अछूतोद्धार, स्त्री-शिक्षा तथा वर्ग-भेद का बहिष्कार आदि सैंकड़ों ऐसी समस्याएँ है, जिनका निराकरण करने के लिए उन्होंने अपना तन-मन सभी कुछ वार कर ऋषि-ऋण से उऋण होने का आजीवन प्रयत्न किया। सम्भव है कि इस परम्परा को और आगे विस्तृत करने के लिए फिर से कोई दयानन्द या श्रद्धानन्द पैदा हो जाए। इसका कारण आज के समाज के रूप का घृणित, कुत्सित और अधर्मी होना है। क्योंकि जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है तब-तब प्रभु-कृपा से ऐसे महापुरुष, युगनेता का जन्म होता है, जो वसुन्धरा पर फैले पापों को विलुप्त करने का कारण हुआ करता है।

महर्षि ने जीवन की लगभग सभी दिशाओं पर प्रकाश डाला है। 'सत्यार्थ-प्रकाश' को इसका उदाहरण माना जा सकता है। सांसारिक और पारमार्थिक दो प्रकार की विद्याएं मानी गई हैं। ऋषिवर ने अपेक्षाकृत पारमार्थिक विद्या पर सम्यक् प्रकाश डाला है। पारमार्थिक विद्या पृथ्वी से लेकर परमाणु पर्यन्त ईश्वर, जीव, प्रकृति, जगत्-तत्त्व आदि के विश्व-ज्ञान को कहा है। दर्शन, उपनिषद् और वेदों पर्यन्त इस विद्या की सीढ़ियाँ हैं और सांसारिक विद्या के अन्तर्गत उन्होंने संसार की व्यापार-सम्बन्धी बातों की जानकारी जैसे-व्यापार की रीतियाँ, हस्तकार्य कारीगरी, खेती, भूगर्भविद्या, पशु-पालन-विधि, ज्योतिष, गणित, वनस्पति, ज्ञान, आमद, उपज, वाणिज्य इत्यादि विषयों को बतलाया है।

सांसारिक और पारमार्थिक सभी शिक्षाएं हम अपनी देव-भाषा संस्कृत से प्राप्त कर जीवन-लाभ ले सकते हैं। संस्कृत का पढ़ना-पढ़ाना महात्माओं ने भी अनिवार्य बतलाया है। जीवन का मूलमंत्र हमारे संस्कृत वाङ्मय में छिपा है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भी आर्यावर्त्त देश की स्वाभाविक सनातनभाषा संस्कृत ही बतलाई है और इसी से देश का कल्याण होने की कामना की है- किसी अन्य भाषा से नहीं।

वे परोपकार करते हुए जिए और परोपकार करते हुए ही मरे। उनकी शारीरिक मृत्यु भले ही हो गई, परन्तु उनकी आत्मा आज भी अमर है।

जर्मन विद्वान् प्रो. एफ. मैक्समूलर ने ऋषि को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा

(शेष पृष्ठ 7 पर)

आर्य समाज फाजिल्का में नव सम्वत एवं आर्य समाज स्थापना दिवस मनाया

आर्य समाज एवं सभी आर्य समाज फाजिल्का के तत्वावधान में 6 अप्रैल 2019 शनिवार को 'आर्य समाज स्थापना दिवस' एवं नवसम्वत्सर 2076, (चैत्र शुक्ल प्रतिपदा) बड़े हर्षोल्लास के साथ आर्य समाज परिसर में आयोजित किया गया। इस पर्व पर 'ग्यारह कुण्डीय हवन-यज्ञ' का आयोजन प्रातः 9.30 पर प्रारम्भ किया गया। इस पर्व में जहां आर्य समाज के सदस्यों ने बड़े उत्साह के साथ भाग लिया वहीं शहर की विभिन्न सामाजिक संस्थाओं ने पूर्ण सहयोग दे कर कार्यक्रम को सुशोभित किया।

सेवा भारती, भारत विकास परिषद, संस्कृत महाविद्यालय, मानव कल्याण सभा, सोशल वेल्फेयर सोसाईटी, Indian Medical Association योग संस्थान फाजिल्का प्रैस कौंसिल, डी. ए. वी. सी. सै. स्कूल, डी. सी. डी. ए. वी. एवं एस. के. बी. डी. ए. वी शताब्दी विद्यालयों के सदस्य, विद्यार्थी, प्राध्यापक, एवं शिक्षकों द्वारा यजमान पदों को सुशोभित किया गया।

यज्ञ उपरान्त डा. सुशील वर्मा, संरक्षक, आर्य समाज फाजिल्का द्वारा नवसम्वत्सर के विषय व आर्य समाज स्थापना दिवस सम्बन्धी जानकारी दी गई। आर्य समाज का समाज के प्रति कार्य, स्त्री शिक्षा, सामाजिक अन्धविश्वास, कुरीतियाँ एवं पाखण्ड के प्रति जागरुकता, अद्वितीय ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' के द्वारा जन जागरण, वेदों की सार्थक व्याख्या एवं उपदेश राष्ट्रीयता, स्वतन्त्रता संग्राम में आर्य समाज के योगदान सम्बन्धी सभी तथ्यों के बारे में संक्षिप्त वर्णन दिया गया।

डा. नवदीप जसूजा जी प्रधान आर्य समाज फाजिल्का एवं स्त्री आर्य समाज द्वारा सभी संस्थाओं व आगन्तुकों का अभिवादन एवं आभार प्रकार किया गया। सभी संस्थाओं के सदस्यों को स्मृति चिन्ह दे कर यज्ञ के प्रति आस्था के लिए सम्मानित किया गया। पुरोहित पद श्री प्रेम नारायण विद्यार्थी जी ने सुशोभित किया।

इस अवसर पर विशेष तौर पर सतीश आर्य जी पूर्व प्रधान, प्रिं. प्रदीप अरोड़ा, पूर्व प्रधान, स्त्री आर्य समाज की प्रधाना श्रीमती इन्दु भूसरी, संरक्षिका कृष्णा कुक्कड़, पूर्व प्रधाना नवीन मक्कड़, सुनीता मिड्ढा व श्रीमती सरोज विदानी, आशा मिनोचा, संरक्षक किशोर चन्द जी पुन्छी, मन्त्री सत्यस्वरूप पुच्छी, प्रफुल्ल नागपाल, सुबोध नागपाल, प्रिं. वी के मित्तल, प्रि. सैनी एवं आर्य समाज के गणमान्य सदस्यों आदि ने उपस्थित होकर पूर्ण सहयोग देकर कार्यक्रम को सफल बनाया। अन्त में शान्ति पाठ के पश्चात् आए हुये आर्य समाज के सभी सदस्यों को प्रसाद वितरित किया गया। **-डा. सुशील वर्मा, संरक्षक, आर्य समाज**

पृष्ठ 6 का शेष-जीवन और मृत्यु में...

है-स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दूधर्म के सुधार का बड़ा काम किया और जहाँ तक समाज-सुधार का सम्बन्ध है, वे बड़े उदार-हृदय थे। वे अपने विचारों को वेदों पर आधारित और उन्हें ऋषियों के ज्ञान पर अवलम्बित मानते थे। उन्होंने वेदों पर बड़े-बड़े भाष्य किए, जिस से मालूम होता है कि वे पूर्ण अभिज्ञ थे। उनका स्वाध्याय बड़ा व्यापक था।''

महर्षि दयानन्द की इच्छा कल्पना के आकाश में पंख फड़फड़ा कर उड़ने की नहीं थी। वे धरती पर चल-फिर कर, हँस-बोल कर सत्य और अहिंसा का प्रतिष्ठापन करने के लिए जन्मे थे।

जिस दिन काठियावाड़ में मौर्वी राज्य के अन्तर्गत एक छोटे से ग्राम टंकारा में मूलशंकर (दयानन्द का बचपन का नाम) ने संवत् १८८१ में जन्म लिया था, वह दिन कितना धन्य था। गुरु विरजानन्द भी उनको शिष्य रूप में पाकर मन ही मन प्रसन्न होते थे और उस दिन को वे भी धन्य मानते थे।

वस्तुतः वे मानवता के प्रतीक थे। भारत के मुकुट थे। सृष्टि के उजाले थे।

आचार्य रामानन्द जी को पुत्रशोक

आर्य जगत् के उच्चकोटि के विद्वान् आचार्य रामानन्द जी शिमला हिमाचल प्रदेश के सुपुत्र श्री मुकेश आनन्द जी का अकस्मात् हृदयगति रूकने से 40 वर्ष की अल्पायु में देहान्त हो गया। श्री मुकेश आनन्द जी पुलिस विभाग में कार्यरत थे। उनकी आत्मिक शान्ति के लिए यज्ञ का आयोजन 24 अप्रैल उनके निवास स्थान ठियोग शिमला में किया गया है। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब श्री मुकेश आनन्द के निधन पर गहरा दुःख व्यक्त करती है। परमपिता परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति एवं सद्गति प्रदान करे व शोक संतप्त परिवार को इस दुःख को सहन करने की धैर्यशक्ति प्रदान करें। दुःख की इस घड़ी में हम सभी शोक संतप्त परिवार के साथ हैं।

आर्य समाज जीरा में वैशाखी व रामनवमी पर्व मनाया गया

दिनांक 14-04-2019 को वैशाखी तथा रामनवमी पर्व बड़ी ही सश्रद्धा व सप्रेम सम्पन्न किया गया, जिसमें सर्वप्रथम इस समाज के पुरोहित श्री किशोर कुणाल जी ने यज्ञ-हवन को बड़ी ही आस्था व निष्ठा के साथ वैदिक रीति से सम्पन्न करवाया। जिसमें मुख्य यजमान् पद को सुमित्रा मैडम जी की पुत्रवधू ने सुशोभित किया, जिन्होंने बड़ी ही भक्ति व भावना के साथ आहुति डाली। इस पावन, पुनीत व पवित्र पर्व के सुअवसर पर अच्छी उपस्थिति देखी गई। यज्ञशाला आर्य भाई-बहनो तथा बच्चों से खचाखच भरा हुआ था। सभी बड़ी ही उमंग तथा उल्लास के साथ 'स्वाहा-स्वाहा' का उच्चारण करते हुए आहुतियाँ आहुत अग्निदेव को कर रहे थे। तथापि इस समाज के प्रधान श्री सुभाषचन्द्र आर्य जी की अनुपस्थिति सभी आर्य सज्जनों के मन को झकझोर रहा था, क्योंकि वे अस्वस्थ होने के कारण इस पर्व में मन से सम्मिलित तो थे, लेकिन तन से सम्मिलित नहीं थे, जबकि उनका आशीर्वाद हमारे साथ था फिर भी सभी का मन उदास था। प्रधान जी जल्द ही स्वस्थ होकर पूर्ववत् मंदिर में जल्द ही आने लगें। इसके लिए पुरोहित जी ने परमपिता परमात्मा से विशेष आराधना की। तत्पश्चात् पुरोहित जी ने वैशाखी पर्व पर संक्षेप में प्रकाश डालते हुए कहा कि यह पर्व रवि की नई फसल घरों में आने का संकेत करता है। क्योंकि अन्न में ही आनंद है नहीं तो दोनों आँख बन्द है। उसके बाद श्री राम के उदान्त चरित्रों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हमें राम बनना चाहिए, रावण नहीं अन्त में पुरोहित जी के सुपुत्र रामदर्शन सत्यार्थी 'एक भजन हम सब मिलके आए गाकर सबको निहाल कर दिया। शांति पाठोपरान्त प्रसाद वितरण किया गया। **-किशोर कुणाल**

आर्य समाज फाजिलका (द्विवार्षिक चुनाव)

14 अप्रैल 2019 को साप्ताहिक हवन-यज्ञ के पश्चात् द्विवार्षिक चुनाव प्रक्रिया के लिए आर्य समाज सभागार में आर्य समाज सदस्यों की उपस्थिति में एक सभा बुलाई गई थी। कार्यक्रम की अध्यक्षता का कार्यभार वरिष्ठ पूर्व प्रधान श्री सतीश आर्य जी को सौंपा गया। पिछली सभा के सभासदों द्वारा अपना कार्यकाल पूरा होने के बाद नए प्रधान के निर्वाचन के लिए नाम मांगे गए। डा. सुशील वर्मा द्वारा वर्ष 2019-20 एवं 2020-21 के लिए श्री संजीव मक्कड़ एडवोकेट जी का नाम प्रधान पद के लिए पेश किया गया जिसका श्री किशोर चन्द जी पून्छी, डा. नवदीप जसूजा जी व अन्य सभी सदस्यों द्वारा एकमत से अनुमोदन किया।

श्री मक्कड़ जी द्वारा यह पद स्वीकार कर लिया गया। सभा ने उनको अपनी भावी कार्यकारिणी बनाने की सहमति भी दे दी। नव प्रधान जी ने आश्वासन दिलाया कि मैं विश्वास एवं निष्ठा से आर्य समाज की सेवा करूँगा और यह सभी के सहयोग से ही सम्भव होगा। उनका पहला सन्देश यही था कि हम सभी समाज में आने का संकल्प लें।

सभी सदस्यों द्वारा करतल ध्वनि से उनका पुष्प मालाएँ डाल कर स्वागत किया गया। शान्तिपाठ के पश्चात सभा विसर्जत हुई।

-डा. सुशील कुमार वर्मा

आर्य समाज धूरी का चुनाव सम्पन्न

आर्य समाज धूरी का चुनाव आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के पर्यवेक्षक श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल एवं श्री विनोद भारद्वाज जी देखरेख में दिनांक 21 अप्रैल 2019 को आर्य समाज के प्रांगण में सम्पन्न हुआ जिसमें श्री अशोक जिन्दल आर्य समाज धूरी के प्रधान चुने गये और उनको अपनी कार्यकारिणी बनाने का पूर्ण अधिकार दिया गया।

-सुरेन्द्र मोहन तेजपाल, अधिष्ठाता साहित्य विभाग सभा

आर्य समाज चौक पटियाला में सात दिवसीय ऋग्वेद परायण महायज्ञ सम्पन्न

आर्य समाज, आर्य समाज चौक पटियाला में 8 अप्रैल से 14 अप्रैल 2019 तक ऋग्वेद परायण महायज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर आर्य समाज चौक पटियाला के प्रधान श्री राज कुमार सिंगला सपत्नीक पूर्णाहुति में आहुतियां प्रदान करते हुये जबकि चित्र दो में मंच पर विराजमान श्री विजेन्द्र शास्त्री जी, आचार्य सोमदेव जी एवं अन्य।

ज्ञान का मिलना भी हमारे पुण्यों का फल है इसलिये वेदरूपी पवित्र ज्ञान पक्षपात रहित न्यायकारी परमात्मा ने आदि सृष्टि में उत्पन्न हुये सबसे पुण्यात्मा पवित्र चार ऋषियों को ही दिया, अन्यों को नहीं जिसके जितने अधिक पुण्य होते हैं, परमात्मा उसको ज्ञान, बल, सामर्थ्य, साधन सम्पन्नता अधिक देता है और जिसके पुण्य न्यून होते हैं उसको यह सब भी कम होते चले जाएंगे। यह कहना था आचार्य सोमदेव का जोकि आर्य समाज मंदिर, आर्य समाज चौक पटियाला द्वारा आयोजित सात दिवसीय ऋग्वेद परायण महायज्ञ में बतौर यज्ञ ब्रह्मा एवं प्रमुख प्रवक्ता के रूप में शिरकत करने पहुंचे थे। यह सात दिवसीय ऋग्वेद परायण महायज्ञ आर्य समाज, आर्य समाज चौक पटियाला में दिनांक 8 अप्रैल से 14 अप्रैल 2019 तक आयोजित किया गया। उन्होंने आगे कहा कि स्त्री पुरुष दोनों बराबर हैं, दोनों को बराबर का अधिकार वेद ने दिया है। यह इस रूप में उचित है कि दोनों अपनी उन्नति करने में स्वतंत्र हैं मुक्ति के अधिकारी दोनों बराबर हैं, ज्ञान प्राप्त करने में दोनों समान रूप से अधिकारी है, दोनों काम करने में स्वतंत्र हैं। परमेश्वर ने यह अधिकार दोनों को समान रूप से दे रखा है। इससे पहले कार्यक्रम का शुभारम्भ विश्व के सर्वश्रेष्ठ कर्म वैदिक यज्ञ के साथ किया गया। आर्य समाज के पदाधिकारी एवं सदस्यों ने विश्व के कल्याण की मंगल कामनाएं करते हुये यज्ञ अग्नि में आहुतियां प्रदान की। कार्यक्रम के संयोजक विजेन्द्र शास्त्री एवं प्रधान राज कुमार सिंगला ने विभिन्न आर्य समाजों राजपुरा, समाना, सरहिन्द, सन्नौर, नाभा, चीका, चण्डीगढ़ आदि से पधारे सभी अतिथियों को स्मृति चिन्ह भेंट कर स्वागत किया। पंडित गजेन्द्र शास्त्री ने इस मौके पर कहा कि आर्य समाज का सिद्धान्त निराकार, सर्वव्यापक, न्यायकारी आदि गुणों से युक्त परमेश्वर को मानना व उसकी उपासना करना तथा ईश्वर व किसी मनुष्य की प्रतिमा पूजन न करना है। आर्य समाज के प्रधान राज कुमार सिंगला ने सभी का धन्यवाद किया और उन्होंने कहा कि परमात्मा किसी जीव विशेष को किसी समुदाय विशेष की रक्षा या दुष्टों के नाश के लिये भेजता है, ऐसा नहीं है। यह अवतारवादियों की कल्पना मात्र है। परमात्मा तो जीवों के कर्मानुसार उनको जन्म देता है। पंकज कौशिक प्रिंसीपल डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल चनारथल खुर्द ने अपनी कविता शिक्षक व आर्य समाज का एक ही काम शिक्षा के साथ साथ बच्चों का चरित्र निर्माण गाकर खूब वाहवाही बटोरी। इस मौके पर डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल समाना से अपने शिक्षकों सहित पहुंचे छात्रों ने भी भजन (शेष पृष्ठ चार पर)

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।